Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 04-09-2025, Accepted: 02-10-2025, Published: 17-10-2025
Volume 6, Issue 2, 2025, Page No. 16-18

चरण सिंह पथिक की कहानियों में किसान दुर्दषा का चित्रण

अशोक कुमार[1], डॉ रामकृष्ण शर्मा[2]
[1] शोधार्थी, हिन्दी विभाग ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत
[2] शोधनिर्देषक, हिन्दी विभाग ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र में चरण सिंह पथिक की कहानियों में चित्रित किसान जीवन की दुर्दशा का यथार्थ विश्लेषण किया गया है। स्वतंत्रता पूर्व ग्रामीण किसान जमीदार, सेठ–साहुकार के शोषण, अत्याचार एवं बेगार का शिकार था। आज किसान सरकारी भ्रष्टाचार तथा सरकार की गलत नीतियों, पूंजीवादी निजी कंपनियों से त्रस्त है। किसान अतिवृष्टि, अनावृष्टि तथा महंगाई से परेशान है। किसान कर्ज के जाल में फंसकर आत्महत्या जैसे जघन्य कदम उठा लेता है। गरीब किसान को कर्ज के कारण अपनी कृषि भूमि से हाथ धोना पड़ता है। जमींदार तथा धनाढ्य लोगों की दृष्टि उसकी जमीन पर रहती है। किसान के खेत में जब उपज अच्छी रहती है तो उपज के भाव कम हो जाते है। किसान अपनी गरीब तथा लाचार स्थिति को जीने के लिए मजबूर है। कहानीकार किसानों की स्थिति में सुधार के लिए आवाज उठाता है।

मूल शब्दः किसान–दुर्दशा, प्राकृतिक प्रकोप, कर्ज, जमींदार, भ्रष्ट सरकारी तंत्र, आर्थिक तंगी, आत्महत्या।

किसान को अन्नदाता कहा जाता है। किसान बिना किसी भेदभाव के सबके उदरपूर्ति के लिए खेत में अनाज बोता है। किसान की इसी दरियादिली का नाजायज फायदा शासन–प्रशासन द्वारा हमेशा उठाया गया है। देश की स्वतंत्रता के सात से अधिक दशक बीत जाने के बाद भी किसान की दयनीय दशा में कोई सुधार नहीं हुआ है। किसान आज भी अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत हैं। किसान जीवन के संघर्ष की करुण कहानी को उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद ने 'गोदान' जैसे उपन्यास के माध्यम से कहा है। प्रेमचन्द के साथ साथ फणीश्वरनाथ रेणु शिवप्रसाद सिंह, भैरवप्रसाद गुप्त, कमलेष्वर, मार्केण्डेय विवेकी राय प्रभृति लेखकों के कथा साहित्य में किसान जीवन की दुर्दशा का चित्रण किया गया है। चरण सिंह पथिक की कहानियाँ बेबाकी के साथ किसान की समस्याओं को हमारे सामने लाती हैं।

पथिक की कहानी "सर्पदंश" किसान जीवन का त्रासदपूर्ण वर्णन करती हैं। ग्यारस्या किसान के जीवन की दर्दनाक दास्ता बयां करती है। कृषि घाटे का व्यवसाय बन गई है। संसार में कोई भी अन्य दूसरा व्यवसाय घाटे में नहीं चलता है, लेकिन कृषि कार्य दूर वर्ष घाटे में चलता है। पारिस्थितिक संकट के कारण जल धरती से बहुत नीचे तक चला गया है, मिट्टी 'अब उर्वर नहीं है और जलवायु परिवर्तन किसानों पर सीधा दबाव डाल रहा है। किसानों को कृषि से संकट हैं। इसलिए किसान अब खेती नहीं करना चाहता। इस कहानी में किसान ग्यारस्मा की पत्नी अपने बेटे अमृत को किसान नहीं बनाना चाहती है। वह इस दारुणिक जीवन से पुत्र को अलग करना चाहती है। वह पुत्र को डॉक्टर बनाना चाहती हैं। ग्यारस्या सोचता है कि अच्छे दिन आयेंगे "ग्यारस्या अपनी कमी को बच्चों के जरिए पूरी करने का ख्वाब पाले अच्छे दिनों के इंतजार में पानी में पड़े सणीज सा गल रहा था। किस–किस पर गुस्सा करे ग्यारस्या..... ?, बढ़ती मँहगाई पर.....? या अपनी पत्नी पर .....? जिसने बेटे को डॉक्टर बनाने की जिद पकड़ कर उसके सामाजिक–आर्थिक फायदे सरकार की तरह गिना डाले थे। उसे रतनी की जिद और बात अभी तक याद है। बेटे से किसी ने पूछा तक नहीं की वो क्या करना चाहता हैं ?"[1]

भारतीय किसान चिंता, तनाव, बेकारी में जी रहा हैं। भारतीय किसान का जीवन हमेशा दुर्दशा में ही रहा हैं। दुनिया का पेट पालने वाला किसान स्वयं भूखे पेट सोने को मजबूर हो रहा हैं। 8 मई, 1933 को मुंशी प्रेमचंद ने अपने लेख 'जबरदस्ती' में लिखा है– "भारतीय किसान की इस समय जैसी दयनीय दशा है उसे कोई शब्दों में अंकित नहीं कर सकता। उनकी दुर्दशा को वे स्वयं जानते हैं– या उनका भगवान जानता है। जमींदार को समय पर मुट्ठी अन्न चाहिए, पहनने के लिए एक चीथडा चाहिए.... नन्हें बच्चे जो चीथडे ओढकर जाडा काटते थे वही अब उनका पिता पहनकर अपने तन की लाज ढक रहा है। माता के पास केवल इतना ही वस्त्र है जितने से वह घूंघट काढ सके, धोती चाहे घुटने तक ही क्यों न खिसक आए।"[2] जैसा प्रेमचंद जी ने उक्त कथन में तत्कालीन कृषक जीवन का यथार्थपूर्ण चित्र खींचा है वैसा ही इस समय का पथिक जी ने।

आखिर किसान खेती करें भी तो क्यों ? दिन–रात मेहनत के बाद भी उसे मिलता क्या है ? उसके बीवी–बच्चे भूखे सोते, उसकी खेती से घर का खर्च ही नहीं चलता, फिर बच्चों की पढ़ाई–लिखाई शादी–ब्याह आदमी कैसे करेगा ? पथिक की कहानी में ग्यारस्या को बाँस की तरह बढ़ती पढ़ी–लिखी जवान बेटी की शादी की चिन्ता ने उसे टी.बी. का का मरीज बना डाला। "अब उसे बेटी के ब्याह की चिंता दिन रात खाये जा रही थी। रोज होते बलात्कारों की खबरों ने उसे ऐसी दहशत में भर दिया कि उसे सपनों में अपनी बेटी की चीख सुनायी देती और उस की आँखो में फिर नींद नहीं आती।"[3]

खेती किसानी ने किसानों का जीना दूभर कर दिया है। खाद, बीज, बिजली, पानी सब दिन ब दिन महंगे होते जा रहे है और दूसरी तरफ आय घटती जा रही हैं। देश की आजादी के कई वर्षों के पश्चात् भी आज किसान अपनी फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य न मिलने के कारण या प्राकृतिक आपदाओं के कारण लगातार कर्ज में फंसता जा रहा है। पहले गांवों में सेठ साहूकार ऋण देकर किसानों का जिंदगी भर शोषण करते थे। आजकल बैंक के चंगुल में फंसा किसान रोज तिल–तिल मर रहा है। पथिक की कहानी में किसान छप्पर में लेटा हुआ है। उसके अंदर कर्ज की ऐसी तपन है कि उसे चैन नहीं। नीचे–ऊपर आत्मा में तपन ही तपन का चित्रण इस प्रकार है कि – "ग्यारस्या अन्दर बाहर की तपन में गोते लगाता आने वाले दिनों के हिसाब–किताब में उलझा हुआ था। किसान क्रेडिट कार्ड का लोन । ट्रेक्टर के लोन की मासिक किश्त । बच्चे की तीन साल कोचिंग फीस का कर्ज । दुनियादारी के बाकी सारी खर्च थे ही।"[4]

किसान जीवन की प्रासदी है कि किसान अपनी कृषि कार्य में लगा व्यय का मुनाफा नहीं निकाल पाता है। जब किसान बाजार में कृषि के लिए बीज खरीदता है तो भाव मँहगा होता है। जब किसान फसल काट कर बाजार में बेचता तो अनाज के भाव गिर जाते हैं। किसान जीवन की एक विडंबना है कि किसान द्वारा उगाए जाने वाले मक्का, आलू, खीरा, शिमला मिर्च और टमाटर के दाम देखिए और उनसे बनी चीजों जैसे पॉपकॉर्न, चिप्स, बर्गर–पिज़्ज़ा का दाम देखिए, जो मैकडोनाल्ड जैसी बहु–राष्ट्रीय कंपनियों में बिकता है। दोनों में कितना फर्क है। इस संदर्भ में पंकज सुबीर उपन्यास में लिखते हैं – "कितना बड़ा मजाक है कि गरीब किसान की मक्का से कॉर्न–फ्लेक्स बनाने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनी के लिए कोई भी न्यूनतम समर्थन मूल्य नहीं हैं। डेढ़ रूपए किलो की मक्का को बहुराष्ट्रीय कंपनी कॉर्न–फ्लेक्स बनाकर तीन सौ रुपये किलो बेचती हैं। मतलब यह कि तीन सौ रूपये किलो या तीस हजार रूपये क्विंटल की दर से। पंद्रह सौ और तीस हजार के बीच बीस गुना का फर्क हैं। बीस गुना। क्या यह बीस गुना आज तक किसी वित्त या कृषि को दिखाई नहीं दिया।[5]

कृषक समस्याओं के दलदल में फंसा हुआ रहता है अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बेमौसम वर्षा, प्राकृतिक आपदाएं, खाद–बीज, कर्ज, अशिक्षा, अंधविष्वास, सरकार की उपेक्षा आदि किसानों के गले का फंदा तैयार कर रही है। खेती करना किसानों के लिए जुआ खेलने के समान हो गया है। किसानों की इन परिस्थितियों के सन्दर्भ में राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर जी का कथन है– "देश के अर्थतंत्र की रीढ़ किसान, मजदूर यदि दुःख में होगें तो वह दिल्ली का वैभव राष्ट्र पर एक बदनुमा दाग होगा। जब तक किसान, मजदूर अपने बहाए रक्त और पसीने का उचित मूल्य नहीं पाते, उनके श्रम की कीमत पर दिल्ली की शान राष्ट्र के लिए कलंक होगा। वह 'कृषक मेघ' की दिल्ली होगी, राष्ट्र का ह्रदय नहीं।''[6]

किसान बीज कीटनाशक कम्पनियों के विज्ञापन के मकडजाल में फँस जाते हैं। कम्पनियों की आकर्षक विज्ञापन और माल पैकिंग के चकाचौंध में किसान महंगे बीज खरीद लेता है। इसका यथार्थ चित्रण पथिक की कहानी सर्पदंश में चित्रित है – "नुक्कड़ नाटक के जरिये किसी बीज कम्पनी का प्रचार किया जा रहा था। ग्यारस्या भी तमाशबीनों में जा खड़ा हुआ। सभी गाँववाले जानते है कि आधे जेठ बीतते–बीतते बीज कम्पनियाँ गाँव–गाँव नुक्कड़ नाटकों और लोकगीतों की मंडलियों के माध्यम से अपने–अपने ब्रांड का प्रचार करने टिड्डे दलों की तरह निकल पड़ती हैं। देशी बीज और उनसे उपजी फसल का स्वाद अब सिर्फ किस्सों में जिन्दा थे। किसानों के दिमाग अब बीज कंपनियों के ब्रांडो में कैद हो चुके थे। वो अपने खेत में कब क्या बायें – बीज कम्पनियों के विज्ञापन ही तय करते। किसान नही। ..... बीज कम्पनियों ने आकर्षक पैकिंग में ग्वार का महंगा बीज उतारा। पैदावर इसी भाव में खरीदने की गारंटी दी। अब कौन बाजरा, तिल, ज्वार बोये ... !! संक्त ठीक निमजा तो क्या कर्जा और क्या कर्जे का शोरबा। ग्यारस्या की आँखों में सपने फिर उगने लगे।''[7]

इस तरह बीज कंपनियाँ किसानों को दिवा स्वप्न दिखाती है। किसान को लगता है कि गोमा ग्वार की खेती ना होकर हजार–हजार के नोटों की खेती करने वाला हो। आँखों में ग्वार का संभावित पैदावार और उसके चढ़ते भावों की चमक थी।

किसान की फसल लहराती है तो किसान सोचता है कि "अब का संवत सब काढे को पाट ही देगा।"[8]

अर्थात् अबकी बार फसल अच्छी हुई तो पुराना सारा कर्जा चुकता हो जायेगा। इसके लिए किसान हर तरह का यत्न करता है। वहीं अपने इष्ट देव से प्रार्थना करता है– "हे भैरों नाथ, लाज रखना अबकी । सर भरेगा तो घर भरेगा । फिर तेरी सवामणि भी होगी।"[9]

लेकिन किसान सब–कुछ प्रयत्न करके, अपना तन–मन धन कृषि के लिए समर्पण करके दुर्भाग्यवश कभी कीट–प्रकोप तो कभी अनावृष्टि– अतिवृष्टि का कहर मंडराया रहता है। पथिक जी की सर्पदंश कहानी में इस विपदा का यथार्थ चित्रण इस प्रकार है– "कीटनाशक छिड़काव का काम निपटा ही था कि तीन–चार दिन बाद बरसात कहर बनकर टूटी। दिन–रात बरसात। खेतों में घूटनों तक पानी। तालाब लबालब। ग्यारस्या सहित कइयों की फसल पानी में डूब चुकी थी। बरसात रोकने के लिए घरों में उल्टी चाखी घुमाने और रोटी सेंकने की मिट्टी की काली पड़ चुकी कडीली फोड़ने के तमाम टोटकें औरतें आजमा कर थक चुकी थीं। कीटनाशक मिले घास खाने से दो भैंसे के तीन–तीन महीने के असमय गर्भ गिरना रतनी के लिए अपना गर्भ गिरने जैसा था। घर में मातम छाया हुआ था। ऐसे में ऊपर से बरसात का कहर। पन्द्रह–बीस दिन तक खेत पानी में डूबे रहे। ग्यारस्या पानी में डूबी अपनी ग्वार को देखता तो उसे रोना आता। वो पागलों की तरह, गल चुके फूल, पत्तियों और मासूम फलियों को हाथों में लेकर कहता– "हजार का है कि पाँच सौ का...?" मरणासन्न अपनी झोंपड़ी में पड़ा–पड़ा सिसक्ता–सुबकत्ता ऊपरवाले को हजारों गालियाँ दे चुका था।"[10]

अन्नदाता के ऊपर कभी कर्ज कभी कीट प्रकोप, कभी अतिवृष्टि मौत का पट्टा लेकर आती है। अतिवृष्टि से हुए नुकसान का आकलन करने गाँव–गाँव घर–घर सरकारी नुमाइन्दे दौरों पर निकलते है। सरकारी मिशनरी मुआवजे का आंकलन सही नहीं करते हैं। किसानों का उनके नुकसान का उचित मुआवजा नहीं मिलता है। सरकार की तरफ से औपचारिकता का निर्वाह होता है। टी. वी पर किसानों के हुए नुकसान की भरपायी कैसे हो इस पर चैनलों में बहस का धन्धा शुरू हो चुका था। ना जाने कहाँ से बिलों से निकल कर कई–कई किसान संघों के नेता राजधानी आकर धरना–प्रदर्शन करते हुए किसानों को परे धकेल कर अखबारों में अपनी जगह बनाना चाहते हैं। किसान संघ के नेता अपनी राजनीति की रोटी सेंकना तथा राजनीति चमकाना चाहते हैं।

कृषि से किसान का जीवन निर्वाह होता हैं। जिसके ऊपर भरोसा करके, उसे सहारा बना कर वह जीना चाहता है वही खेत अब उसके लिए मौत की वजह बनता है। इस कथन के संदर्भ में रमाज्ञा शशीधर ने अपनी कविता "बुरे समय में नींद" में बहुत ही प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया हैं। खेत को इन्होंने एक अलग नजरिए से देखा है कि खेत से केवल रोटी ही नहीं आती, वहाँ से मुसीबतों का पहाड़ भी आता है और मौत का साजो–समान भी आता है।

पथिक जी के कहानी का पात्र ग्यारस्या बुरे हालातों से जूझता हुआ, फसल चौपट हो जाने, कर्ज अधिक हो जाने के कारण आत्महत्या जैसा जघन्य कदम उठा लेता हैं। सरपंच ने ग्यारस्या को झोंपडी के अंदर औंधे मुँह पड़ा हुआ देखकर आवाज लगायी। "ग्यारस्या ऽऽऽ.... ओ... ग्यारस्या..... ! कब तक सूतो रहवेगौ भाया.....देख तो कुण– आयो हैं। सरपंच ने उसे सीधा किया। मुँह झागों से भरा हुआ था। झिल्लगी खाट के नीचे कीटनाशक की एक खाली शीशी लुढ़की हुई थी। सरपंच ने नब्ज देखी। कलेजा मुँह को आ गया।"[11]

ऐसे सैंकड़ो हजारों किसान आत्महत्या कर बैठते हैं। इस तरफ सरकार को उचित कदम उठाने चाहिए।

फाँस उपन्यास की पात्र शकुन कहती है–

> ''इस देश का किसान कर्ज में ही जन्म लेता हैं, कर्ज में ही जीता हैं और कर्ज में ही मर जाता है।"[12]

पथिक जी कहानी 'रोजड़े' में किसान की दुर्दशा का चित्रण में अवारा पशुओं का वर्णन किया है। फसल की रखवाली के लिए

रातभर जगना पड़ता हैं। कमर तक ऊँची चरी अब भैंसों के चरने लायक होने लगी थी। तीन–चार दिनों से रोजड़ों की संख्या में इज़ाफ़ा हो गया था। एक टोले को भगाते, तो दूसरा आ जाता । दिन–रात की रखवाली के बावजूद काफ़ी नुकसान हो चुका था। किलाण और जगरूप किसान साझेदारी में कृषि कर रहे थे। जगरूप को बस को दो दिन के लिए बाहर जाना था, इसलिए किलाण को कहते है ''चरी की रखवाली ठीक से करना ऐसा न हो कि रोजड़े सफाचट कर दें और तू सोया रहे।"[13]
किलाण कुछ दिन बाद खेत पर आया। वहाँ का दृश्य देखकर उसे चक्कर आने लगे। वह झोपड़ी की तरक लपका। झोपड़ी के अंदर से आई आवाज सुनकर वह ठिठक गया।

"कोण ?"
"मैं.....मैं..... हूँ किलाण।"
"किलाण !" जगरूप लपककर बाहर आया और किलाण से लिपट गया।
"हमारी चरी ?" किलाण ने फफक कर कहा।
"नेता खा गए।" जगरूप ने रुँधे गले से बस इतना ही कहा।[14]

विडंबना यह है कि भारत के अधिकांश किसान आज भी भूखे नंगे जीवन बीताने में विवश हैं। सदियों से देश की अर्थव्यवस्था को सशक्त करने में कृषकों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। लेकिन वही किसान आज भी आर्थिक तंगी से जूझ रहा है। विकास के मामले में वह बहुत पीछे रह गया। जिसके कारण हमें आज कृषक आत्महत्या करते हुए नजर आते हैं। शासनतंत्र के चक्रव्यूह में फंसकर कृषक अपनी जमीन जायदाद बेचकर मजदूर बनता जा रहा है और शहर के तरफ पलायन कर रहा है। फसल की बुआई से लेकर कटाई तक किसान का जीवन तलवार की धार पर चलने जैसा है। कृषि कार्य एक जुआ है जहाँ जीतने की संभावना बहुत कम रहती है और हारने की अधिक। कुदरत, सरकार, पशु–पक्षी, बिचोलिएं हर कहीं से किसान को छला जाता हैं। उसके पूरे परिवार का भविष्य फसल से मिलने वाले धन पर ही टिका रहता है। कुदरत की मार और मौसम की अनिश्चितता ने किस तरह किसानों के जीवन को नरक बना दिया है।

संदर्भ सूची

1. सर्पदंष, चरण सिंह पथिक – मैं बीड़ी पीकर झूंठ नीं बोलता कलमकार मंच, जयपुर 2019 पृ.सं.41
2. इस्पालिका– जुलाई– दिसंबर 2013 सं. अविनाष कुमार सिंह –पृ.सं. 31
3. सर्पदंष, चरण सिंह पथिक – मैं बीड़ी पीकर झूंठ नीं बोलता कलमकार मंच, जयपुर 2019 पृ.सं.43
4. वही – पृ.सं. 39
5. पंकज सुबीर – अकाल उत्सव, पृष्ट सं. 41–42
6. डॉ रामकिंकर पांडे, हिन्दी साहित्य में किसान – पृ.सं. 178
7. सर्पदंष, चरण सिंह पथिक – मैं बीड़ी पीकर झूंठ नीं बोलता कलमकार मंच, जयपुर 2019 पृ.सं.44
8. वही – पृ.सं. 45
9. वही
10. वही – पृ.सं. 46
11. सर्पदंष, चरण सिंह पथिक – मैं बीड़ी पीकर झूंठ नीं बोलता कलमकार मंच, जयपुर 2019 पृ.सं.46
12. सजीव – फॉस पृ.सं. 15
13. रोजड़े, चरण सिंह पथिक गौरू का लैपटॉप और गार्की की भैंस अरू पब्लिकेषन प्रा.लि. नई दिल्ली पृ.सं. 129
14. रोजड़े, चरण सिंह पथिक गौरू का लैपटॉप और गार्की की भैंस अरू पब्लिकेषन प्रा.लि. नई दिल्ली पृ.सं. 129